Impact Factor (SJIF): 6.092 E-ISSN: 2583-1615

International Journal of Research in Academic World

Received: 10/January/2024 IJRAW: 2024; 3(2):69-72 Accepted: 13/February/2024

मध्य सोन घाटी से प्राप्त उच्च पुरापाषाणिक त्रिकोणात्मक धार्मिक प्रतीक संरचना

*[1]डॉ. विनोद यादव

*[1]असिस्टेन्ट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, राजकीय महाविद्यालय मंगरौरा, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश

आधुनिक मानव के उद्भव और तकनीकी विकास से सम्बन्धित प्रारम्भिक काल का नाम उच्च पुरापाषाण काल है। स्तर विन्यास के अनुसार उच्च पुरापाषाण काल मध्य पुरापाषाण काल के बाद तथा मध्य पाषाण काल के पहले आता है। मानव विकास के इतिहास के दृष्टिकोण से उच्च पुरापाषाण काल का विशेष महत्व है। इस काल में मेधावी मानव (होमो सेपियंस सेपियंस) के विकास के साथ ही मानव के सांस्कृतिक विकास का नवीन स्वरूप उभर कर सामने आता है। मध्य पुरापाषाणिक मुस्तीरियन और लेवॉलोइसियन संस्कृति के पश्चात् आरम्भ होने वाली पाषाण परम्परायें उच्च पुरापाषाण काल के अन्तर्गत सम्मिलित की जाती हैं। यह काल सांस्कृतिक एवं प्रजातीय दोनों ही दृष्टियों से उल्लेखनीय परिवर्तनों के लिए प्रसिद्ध रहा है। इस काल में मानव के सांस्कृतिक विकास में अपूर्व गतिशीलता आ जाती है। इस काल में मानव समाज का गठन पूर्ववर्ती कालों से अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली लगता है। यह काल मानव के कलात्मक ज्ञान की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। इस काल की तकनीकी प्रगति को देखने से स्पष्ट पता चलता है कि मानव गतिविधियों की विविधता में विशिष्टता का समावेश हो गया था।

मुख्य शब्दः बघोर, उच्च पुरापाषाण काल, मातृदेवी, अंगारी माई, मेढ़ौली।

प्रस्तावना

भारत की प्रागैतिहासिक संस्कृतियों के अध्ययन के लिए मध्य सोन घाटी का विशेष महत्व रहा है। सोन नदी भारत की प्राचीनतम नदियों में से एक है, जो मध्य प्रदेश के अमरकण्टक पहाड़ी से निकलकर उत्तर–पश्चिम दिशा में बहती हुई बिहार प्रान्त में पटना के निकट गंगा नदी से मिलती है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि मध्य सोन घाटी की भूतात्विक संरचना इस प्रकार की है कि यह किसी भी स्थान पर 10 किलोमीटर से अधिक चौड़ी नहीं है और प्रारम्भ से लेकर अब तक इस क्षेत्र में इसका मार्ग परिवर्तित नहीं हुआ है। चूँकि सोन एवं बेलन घाटी के बीच की दूरी ज्यादा नहीं है, अतः दोनों के भूतात्विक जमावों की बनावट में कोई विशेष अन्तर नहीं है। सोन घाटी के प्रागैतिहासिक महत्व की ओर येल–कैम्ब्रिज अभियान दल के डी टेरा[1] तथा उनके बाद ज्वायनर[2] ने संकेत किया था। प्रो० राधाकान्त वर्मा[3] तथा निसार अहमद[4] ने ऊपरी सोन घाटी का सर्वेक्षण किया। कालान्तर में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग ने प्रो0 जी०आर० शर्मा के निर्देशन में मध्य सोन घाटी का विस्तृत सर्वेक्षण करके प्रातिनूतन काल के भूतात्विक जमावों तथा पाषाण कालीन पुरास्थलों को मध्य प्रदेश के सीधी जिले में खोज निकाला।[5]

*Corresponding Author: डॉ. विनोद यादव

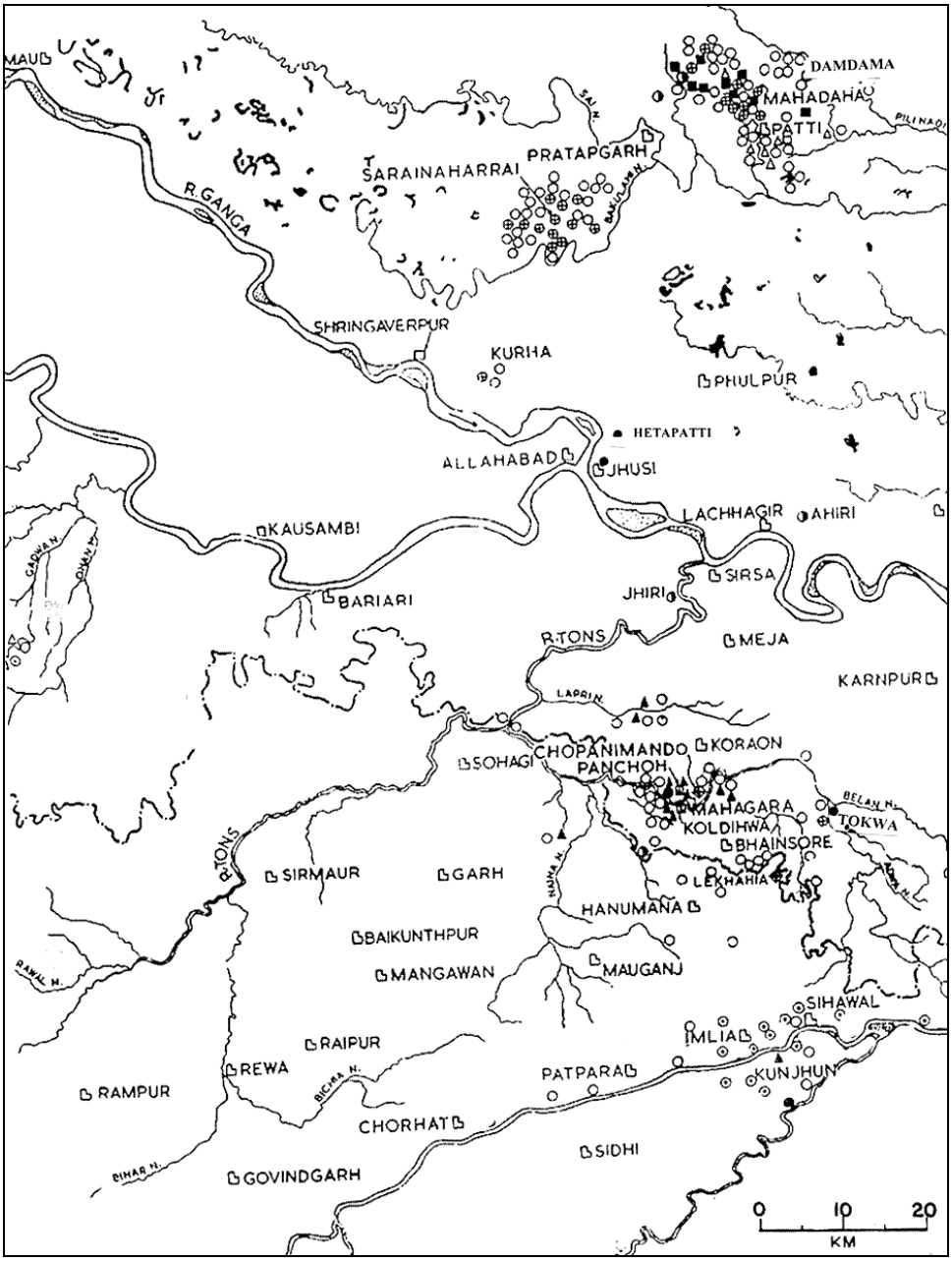

चित्र 1: उत्तर–मध्य भारत के प्रमुख पुरास्थल

बघोर–I पुरास्थल (24°35'2" उत्तरी अक्षांश, 82°18'54" पूर्वी देशान्तर) मध्य सोन घाटी में कैमूर की पाद पहाड़ी पर मेढ़ौली गाँव से लगभग 4 किलोमीटर उत्तर–पूर्व में सीधी जिले (मध्य प्रदेश) में स्थित है। यह पुरास्थल तीन ओर से कुढेरी नाला से घिरा हुआ है, जो मुड़कर 8–10 किलोमीटर दक्षिण में बहकर सोन नदी में मिलता है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग एवं कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के द्वारा इस पुरास्थल का उत्खनन सम्मिलित रूप से सन् 1980 ई० में कराया गया। बघोर–I का उत्खनन प्रो. जी.आर. शर्मा एवं प्रो. जे.डी. क्लार्क के निर्देशन में प्रो. डी. मण्डल, प्रो. जे.एन. पाल तथा प्रो. जे.एम. केन्वॉयर इत्यादि के द्वारा कराया गया था। [6]

सन् 1982 में इस पुरास्थल पर पुनः उत्खनन कार्य किया गया। बघोर–I में दो सत्रों में 286 वर्गमीटर क्षेत्र में किये गये उत्खनन के फलस्वरूप अनेक कार्य–स्थल प्रकाश में आए (चित्र–2), जहाँ पर उच्च पुरापाषाण युगीन मानव फलकीकरण करता था। वे चर्ट तथा चाल्सेडनी के नालीमत बेलनाकार कोरो से निकाले गये ब्लेडों पर पुनर्गढ़न करके उपकरण बनाते थे। यहाँ से प्रभूत मात्रा में अनुपयोजित सामग्री प्राप्त हुई है। उनके रहने के स्थान पर चूल्हे के अवशेष भी मिले हैं।

उपकरण समूह में मॉडीफाइड उपकरण विभिन्न प्रकार के ब्लेड, त्रिभुज, छिद्रक तथा कतिपय स्क्रेपर इत्यादि सम्मिलित थे। बहुत से ब्लेड और फलक अपने मूल कोर में फिट हो जाते हैं। कुछ ब्लेड और ब्लन्टेड वैक्ड या ट्रन्केटेड ब्लेड स्पष्टतः एक ही कोर से निकले हुए दिखायी पड़ते हैं (चित्र–3)। इनके अतिरिक्त प्रस्तर हथौड़े तथा कुछ आंशिक छिद्र वाले गदा शीर्ष प्रकार के प्रस्तर भी मिले थे।

चित्र 2: बघोर–I उत्खनन के समय का चित्र

चित्र 3: बघोर–I के उत्खनन से प्राप्त बैक्ड ब्लेड उपकरण

चित्र 4: उत्खनन से प्राप्त मातृदेवी का पूजा स्थल, बघोर–I

सोन घाटी में स्थित बघोर प्रथम के उत्खनन की सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि यहाँ के उत्खनन से उच्च पुरापाषाण कालीन मानव के धार्मिक आचार–विचार के बारे में कतिपय संकेत मिलते हैं[7]। बघोर प्रथम के उत्खनन के समाप्त होते–होते एक गोलाकार पत्थरों का चबूतरा चिन्हित किया गया, जो ऊपर की सतह से 35–40 सेंटीमीटर की गहराई में था। उसके ऊपर के 10 सेंटीमीटर में पड़े अनुपयोजित तथा उपयोजित सामग्री को हटाने के उपरान्त नीचे सैण्डस्टोन तथा चर्ट के टुकड़े देखे गए। सभी चर्ट के टुकड़ों को हटाने के उपरान्त एक गोलाकार 85 सेटीमीटर व्यास का टुकड़ा दिखाई पड़ा। इस चबूतरे के मध्य में एक सैण्डस्टोन का टुकड़ा था, जिस पर प्राकृतिक संकेन्द्रिक त्रिकोणात्मक (Concentric Triangle) सरचना बनी हुई थी[8] (चित्र–4)।

इस संरचना के कई टुकड़े हो गए थे, किन्तु संयोगवश सभी टुकड़े प्राप्त हो गए। यह लगभग 15 सेंटीमीटर ऊँचा, 6.50 सेंटीमीटर चौड़ा तथा 6.50 सेंटीमीटर मोटा था[9] (चित्र–5)। चूँकि इसके सात टुकड़े केन्द्र के पास मिले थे, इससे अनुमान किया जा सकता हैं कि यह केन्द्र में ही स्थापित था। पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि चबूतरे का निर्माण किया गया था तथा नृजाति विज्ञान के साक्ष्यों के आधार पर इसका समीकरण मातृदेवी से किया जाता है। इस प्रकार से यह सम्पूर्ण संरचना एक पूजा स्थल के रूप में मान्य की जा सकती है। इसी प्रकार के प्राकृतिक पत्थर का पूजन देवी के रूप में अभी तक इस क्षेत्र की कोल तथा बैंगा जनजातियों में प्रचलित है। इन्हें 'केराई की देवी,' 'अंगारी देवी' तथा 'अंगारी माई' आदि नामों से पुकारा जाता है [10]।

चित्र 5: बघोर–I के उत्खनन से प्राप्त त्रिकोणात्मक संरचना

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि बघोर प्रथम के समीप केराई नामक स्थान पर नीम के पेड़ के नीचे एक ऐसे ही

पत्थर की पूजा आज भी 'अंगारी माई' के नाम से होती है। बघोर पुरास्थल के ही समीप मेढ़ौली गाँव में पीपल तथा नीम के पेड़ों के नीचे इसी रूप के प्राकृतिक प्रस्तर खण्डों की पूजा अब भी प्रचलित है (चित्र–6, 7)।

चित्र 6: मेढ़ौली गाँव के पास नीम के पेड़ के नीचे अंगारी माई का पूजा स्थल

चित्र 7: नीम के पेड़ के नीचे रखी त्रिकोणात्मक संरचना

उपर्युक्त साक्ष्यों से स्पष्ट है कि उच्च पुरापाषाण काल से लेकर अब तक मातृदेवी या शक्ति पूजा अथवा अंगारी देवी (अग्निदेवी) की पूजा अनवरत रूप से चली आ रही है। मध्य सोन घाटी में हुए इस उत्खनन की इन उपलब्धियों ने भारतीय जीवन एवं धर्म को प्राचीन आधार प्रदान किया और प्रागैतिहासिक जीवन से आधुनिक धार्मिक रीति–रिवाज एवं परम्पराओं का सम्बन्ध स्थापित किया है। तंत्र परम्परा में त्रिभुज का महत्व इसी स्रोत से प्राप्त हुआ जान पड़ता है। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी, लन्दन के पुरातत्व विभाग के पुराविद् रेनफ्रू कोलिन ने ऐसे साक्ष्यों को नृतत्व विज्ञान के साक्ष्यों में अनवरत यौन प्रतीक पूजा का सबसे प्राचीन उदाहरण [11] माना है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त साक्ष्यों से स्पष्ट है कि उच्च पुरापाषाण काल से लेकर अब तक मातृदेवी या शक्ति पूजा अथवा अंगारी देवी (अग्निदेवी) की पूजा अनवरत रूप से चली आ रही है। मध्य सोन घाटी में हुए इस उत्खनन की इन उपलब्धियों ने भारतीय जीवन एवं धर्म को प्राचीन आधार प्रदान किया और प्रागैतिहासिक जीवन से आधुनिक धार्मिक रीति–रिवाज एवं परम्पराओं का सम्बन्ध स्थापित किया है। तंत्र परम्परा में त्रिभुज का महत्व इसी स्रोत से प्राप्त हुआ जान पड़ता है। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी, लन्दन के पुरातत्व विभाग के पुराविद् रेनफ्रू कोलिन ने ऐसे साक्ष्यों को नृतत्व विज्ञान के साक्ष्यों में अनवरत यौन प्रतीक पूजा का सबसे प्राचीन उदाहरण[11] माना है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. डी.टेरा, एच. एण्ड टी.टी. पैटरसन, 1939, स्टडीज ऑन द आइस एज इन इण्डिया एण्ड एसोसिएटेड ह्यूमन कल्चर्स, वाशिंगटन, कारनेजी इंस्टीट्यूट, पब्लिकेशन नं.– 493, पृ. 313.
2. ज्वायनर, एफ.ई., 1963, इनवायरनमेण्ट ऑफ अर्ली मैन विद स्पेशल रिफरेंस टू द ट्रॉपिकल रीजन्स, एम. एस.राव विश्वविद्यालय, बड़ौदा, पृ. 57.
3. वर्मा, आर.के., 1964, स्टोन एज कल्चर्स ऑफ मिर्जापुर, डी.फिल. थीसिस, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, पृ. 73–75.
4. अहमद, निसार, 1984, द स्टोन एज कल्चर्स ऑफ द अपर सोन वैली, मध्य प्रदेश, पी–एच.डी. थीसिस, दकन कालेज, पुणे, पृ. 4–117.
5. इण्डियन आर्कियोलॉजीः ए रिव्यू, 1975–76, आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, पृ. 27.
6. केन्वायर, जे.एम., जे.डी. क्लार्क, जे.एन. पाल एण्ड जी.आर. शर्मा, 1983, एन अपर पैलियोलिथिक स्राइन इन इण्डिया?, एन्टीक्यूटी–LVII(220)] पृ. 123–28.
7. केन्वायर, जे.एम., जे.डी. क्लार्क, जे.एन. पाल एण्ड जी. आर. शर्मा, 1983, एन अपर पैलियोलिथिक स्राइन इन इण्डिया ? एन्टीक्यूटी– LVII(220)], पृ. 88–97.
8. वर्मा, आर.के., 2005, पुरातत्व अनुशीलन, परम ज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 92.
9. शर्मा, जी.आर., 1985, भारतीय संस्कृतिः पुरातात्विक आधार, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 33
10. प्रधान, सदाशिव, 2008, रॉक आर्ट ऑफ उड़ीसा, डी. लिट. थीसिस, सम्भलपुर यूनिवर्सिटी, उड़ीसा.
11. रेनफ्रू, कोलिन, 1987, आर्कियोलॉजी एण्ड लैंग्वेजः द पजल ऑफ इण्डो–यूरोपियन ओरिजिन्स, जोनाथन केप, लन्दन.।